फरीदाबाद

मजदूर समाचार

दुनियां को बदलने के लिए मजदूरों को खुद को बदलना होगा

नई सीरीज नम्बर 78 दिसम्बर 1994

इस अंक में

- नींद के ख्वाब
- किसकी सुरक्षा
- कम्पीटीशन के गुल
- वी एक्स एल इंजीनियरिंग
- मँहगा नाटक

. . . हम लोगों की चीखने-चिल्लाने की स्वाभाविक प्रवृति को मार देने का काम माता, पिता, शिक्षक आदि पूरा कर देते हैं। बच्चा अपनी आवश्यकता, पीड़ा आदि को छुपाता नहीं, रो-धो कर व चीख-चिल्ला कर बताता है। हम हैं कि अपनी हर तकलीफ छुपाते हैं। न तकलीफ ही मिटती है और न हम ही मिटते हैं। . . . हमको आज से ही निर्णय करना होगा कि किसी भी अपने-पराये को – शिशु से ले कर बूढे तक को – चीखने-चिल्लाने से मना न करें। बच्चों को डाँट कर या डर दिखा कर चुप न करें। उन से रोने-चिल्लाने का कारण पूछ कर जानें। कारण का निवारण नहीं कर सकते तो हट जायें। अपनी सुनाने-बताने के लिये भी 'चुप होने' को नहीं, सुनने को कहें। अगर चिल्लाने का कारण जायज है तो साथ दें या शक्ति बटोर कर, सुस्ता कर और जोर से हल्ला बोलने में समर्थ होने को कहें। . . . मन में आती प्रतिक्रिया को जगायें- बतायें। इसे दबायें नहीं – न अपनी और न और की। जो कुछ भी अपने को पीड़ा दे, उसे बतायें, कहें, प्रचारित करें – छुपायें नहीं। बलात् जो हो उसे छुपाना आत्महत्या है। पीड़ा का प्रचार पीड़ा देने वाले को दुत्कार-फटकार है।

14.11.94 – राजबल, मुरादाबाद

मत करो मतदान, मत मारी जायेगी।

फरीदाबाद में नगर निगम चुनाव के लिये नवम्बर-भर 500 से ऊपर मैं-मैं-मैं दस लाख से ज्यादा तुम-तुम-तुम को उनकी जिन्दगी सुधार देने की बात इस कदर कान-फोड़ शोर में सुनाते रहे कि कई लोगों को स्टेनगनों, सैल्फ लोडिंग राइफलों, पिस्तौलों, डन्डे-थप्पड़-मुक्कों और बदजुबान से लैस पुलिसवालों के संग आतंक की प्रतिमूर्ति बने डी सी व एस पी रोशनी की किरण नजर आये। छोटे गुन्डों पर नजर रखते, उन्हें गुन्डागर्दी के नियमों का पालन करने को प्रेरित करते बड़े गुन्डों की तारीफों के पुल...

विदूषक बौखला गया है, कुछ कह ही नहीं पा रहा है।

फैक्ट्री में, बस्ती में, निजी जिन्दगी में समस्यायें ही समस्यायें हैं। बातें इनके समाधान की होती हैं और यह बेशर्म हैं कि बढती ही जा रही हैं।

फैक्ट्री में चुनाव हों चाहे पंचायत, नगर निगम, एम एल ए - एम पी के इलैक्शन हों, कुछ समय के लिये तीन प्रवृतियां प्रबल हो कर छा जाती हैं।

थोड़े से लोग जो अपने को समझदार मानते हैं वे समस्याओं के समाधान के लिये अच्छे या समरथ प्रतिनिधि चुनने की वकालत करते हैं। इनके अनुसार लोग बेवकूफ हैं जो सही आदमी को आगे नहीं लाते। फलां-फलां-फलां लायक असली लीडर हो तो सब को तार दे, यह इनकी समझदारी का सार है।

ज्यादातर लोग "हमारा" बन जायेगा तो "हमारी" हिस्सा-पत्ती बढ जायेगी से प्रेरित हो कर इन सर्कसों में शिरकत करते हैं। "हम", "हमारा" और "हमारी" की पहचान परिस्थिति अनुसार डिपार्टमेंट, शिफ्ट, गांव-बस्ती, जाति, धर्म, क्षेत्र, देश द्वारा चिन्हित होती हैं। समस्याओं के समाधान की बजाय इस मामले में टुकड़े की साइज धुरी बनती है और व्यवहारिकता- व्यवहारिकता-व्यवहारिकता चोला बनती है।

चन्द लोग, जो कि इन ड्रामों में अत्याधिक सक्रिय होते हैं, वे अपनी जान-पहचान वाले को बनाने के लिये जी-जान लड़ाते हैं। "मुझे फायदा" इनकी निर्लज्जता और मेहनत की धुरी होती है। जान-पहचान वाले के चुने जाने पर कैन्टीन में मुफ्त खाना, काम नहीं करना-हल्का काम, एडवान्स, वैलफेयर फन्ड से पैसे, राशन की दुकान, थाने में पहुँच, ठेके, प्लाट आदि-आदि इनके जीवन का लुब्बो-लुबाव होता है। ऐसे लोगों की गिनती सौ में पांच-सात से ज्यादा नहीं हो सकती।

और, बदहाली का जीवन जीने को मजबूर जो व्यक्ति इस अथवा उस द्वारा विकास, बहुत विकास की बात करता है उसे उल्लू कहना उल्लू का अपमान है।

ऐसे में "सब लीडर चोर हैं" कहना पर्याप्त नहीं है क्योंकि हमारी यह प्रवृतियां हैं जो हमें इस-उस के पीछे लगने को प्रेरित करती हैं, जलसे-जलूसों में हमें जनसमूह का रूप देती हैं। और फिर, इन-उन कारणों की बाढ से कमजोर पड़ती जा रही वोट डालने, किसी को चुनने को प्रेरित करती इन प्रवृतियों में जान डालने के लिये रेवड़ी बांटने से ले कर खून-खराबे तक के इंजेक्शन लगाये जाते हैं।

(बाकी पेज चार पर)

बेगानी रीत काहे की प्रीत

असेम्बली लाइन पर काम करता हर कोई अपने अनुभव से इतना तो जान ही जाता है कि मैनेजमेंटों की प्रोडक्शन योजना का एक अहम पहलू फैक्ट्री में वरकरों से अधिक से अधिक कार्य करवाना होता है। मैनेजमेंटें सघन, तीव्र व अधिक कार्य द्वारा मजदूरों के वर्क लोड में सतत वृद्धि करती हैं। मैनेजमेंटों की रिसर्च तथा ट्रेनिंग इन्सटीट्यूटों का सामरिक लक्ष्य कार्य की गति बढाने तथा वरकरों को काबू में रखने के लिये लगातार नये-नये तरीके इजाद करना होता है। इस सिलसिले में वरकर को पूरे समय कार्यरत रखने को अग्रसर मैनेजमेंटें फैक्ट्री में मजदूर को हर मिनट में 45 सैकेन्ड कार्य में जुटाने में सफलता प्राप्त कर और आगे बढी हैं। जो नये तरीके प्रचलन में आ रहे हैं उन्हें जस्ट इन टाइम, लीन प्रोडक्शन, फ्लेक्सीबल प्रोडक्शन, जापानी तरीका, टीम वर्क आदि नामों से महिमामंडित किया जा रहा है। आधुनिक में नित आधुनिक तरीकों का सिलसिला वरकर को अब हर मिनट में 57 सैकेन्ड कार्य में जोतने के लिये डिजाइन किया गया है। जापान स्थित टोयोटा मोटर फैक्ट्रियों की असेम्बली लाइनों पर कार्यरत मजदूर को हर 18 सैकेन्ड में 20 शारिरिक क्रियायें करनी पड़ रही हैं।

इस कदर गहन व तीव्र कार्य मजदूरों के शरीर व मन को तहस-नहस करने के खतरे लिये है। कार्यरत मजदूर की अत्याधिक काम से अचानक मौत मैनेजमेंटों की इस नई पद्धति की एक सौगात है। जापान में जून 1990 तक ही 1500 मजदूर काम करते-करते इस प्रकार अचानक मर गये।

सघन, तीव्र व अधिक कार्य को अग्रसर मैनेजमेंटों को हर समय मजदूरों के प्रतिरोध का डर बना रहता है। डराने, धमकाने, बहलाने, फुसलाने, भरमाने के संग-संग मजदूरों की प्रतिक्रिया जानने के लिये सुई चुभा कर यह देखने कि कहाँ तक चुभाने तक तीखा विरोध नहीं होता, मैनेजमेंटें अपने कदम तय करती हैं। मैनेजमेंटों का तरीका आमतौर पर छोटे-छोटे कदम उठा कर, उँगली पकड़ कर पहुँचा पकड़ना होता है। फैक्ट्री में हर कदम पर संघर्ष करते और संघर्ष के लिये कमर कसे मजदूर ही मैनेजमेंटों की इन सामरिक नीतियों का मुकाबला कर सकते हैं। मैनेजमेंटों के हर छोटे-बड़े कदम के प्रति मजदूरों की सजगता अथवा लापरवाही निर्णायक महत्व की हैं।

(जानकारी हमने "कैपिटल एन्ड क्लास", अंक 53 में टोनी स्मिथ के लेख से ली है।)

जो चाहते हैं कि यह अखबार ज्यादा लोग पढ़ें, ऐसे 300 मजदूर अगर हर महीने पाँच-पाँच रुपये दें तो इस अखबार की पाँच हजार की जगह दस हजार प्रतियाँ फ्री बँट सकेंगी।

मजदूर लाइब्रेरी, आटोपिन झुग्गी, एन. आई. टी. फरीदाबाद -121001 (यह जगह बाटा चौक के पास है)

खुद से बात करना, अपने आप से कहानी कहना हम सब की आदत में शुमार है। हमारी यह कथायें कभी वीर रस पूर्ण, कभी सहज-सामान्य, कभी दुखद तो कभी हास्यप्रद होती हैं। लेकिन जब-तब यह कहानियाँ थम जाती हैं – अधिक तकलीफदायक अथवा ज्यादा बेतुकी होने की वजह से या कोई प्रतिक्रिया न मिलने के कारण। अपने किस्सों के बिखरे तारों को पिरोने के लिये इस पन्ने का इस्तेमाल करें। और फिर यहाँ अपनी बात कहना बचत भी लिये है। आपको अपनी कथा छपवाने के लिये कोई पैसे खर्च नहीं करने पड़ेंगे।

थोड़ी जमीन वाले की जुबान

माना दाई, पिरथी बढ़ी, फूसा नाई, कलुआ धोबी, बुन्दू दर्जी, जुम्मन बलहार, फुल्लू मजूर वगैरह और एक हेक्टेयर जमीन का जोत्ता-खोद्दा मैं, सब एक ही जैसे हैं। जैसा मैं वैसे ही ये । हाँ, मेरे पास जमीन है। इसकी बाजार में कीमत है। यही मेरी साख है। इसे बेच दूँ तो फिर हम में कोई फर्क नहीं। न बेचूँ तो भी कोई फर्क नहीं। इस जमीन का मोल अब साख है। जब यह बिकेगी तो कर्ज चुकाने की मजबूरी में ही। मेरे पास नकद नहीं रहेगा। अब मेरा हाल जान लो।

इस एक हेक्टेयर में मुझको रोजाना – साल के बारहों महीने ; तीन सौ पैंसठ दिन काम रहता है। चौबिसों घन्टे इसी की उधेड़-बुन में लगा रहता हूँ। पलेवा, जुताई, बुवाई, निकाई, सिंचाई, गुड़ाई, कटाई, सफाई आदि के साथ ही इसकी रात-दिन की रखवाली करता हूँ। बीज, खाद, पानी, डीजल, बिजली, औजारों, गाड़ी-बुग्गी वगैरह के इन्तजाम में बखत-कुबखत मारा-मारा फिरता हूँ। सरकारी अहलकारों-ओहदेदारों की चिरौरी अलग, और मंडी, शहर,बजार आदि में बेच-खरीद अलग। मेरा और मेरे परिवार का खाना-पहनना सबके सामने है। ज्यादातर खेत में ही खाना होता है। बूढ़ी माँ और बाप, जोरू और बच्चे भी हाथ बटाते हैं। कभी-कभी मजूर भी बुलाता हूँ। काम की हालत – लू, पाला, बारिश। हमेशा खुले आसमान के नीचे बिजली, आँधी, तूफान झेलना होता है। हर वक्त कीड़े-कांटे, साँप-सलींडे का डर। और कौशल इतना कि जरा सी चूक और सब चौपट। मगर मुझको इसके बदले में मिलता क्या है?

पैदावार का सरकार औसत लेती है बड़े पैमाने पर। उपजाऊ जमीन भी होती है और मौसम के लिहाज से भी फसल अच्छी-बुरी स्थान भेद से रहती ही है। खाद, बीज, पानी की किस्म का भी फर्क पड़ता है। चलो इसे भी माना। मगर जब उपज के भाव तय होते हैं तब औसतन् लागत का दाम जोड़ दिया जाता है, यानि खाद, बीज, पानी आदि की कीमत लागत में जोड़ दी जाती है। ठीक है यह दाम आया और बाजार में चुकाया। इस लागत पर कोई ब्याज नहीं मिलता जो कि देना पड़ता है। अब मुझको अपनी मजदूरी भी इसी में मिलनी है। वह भी चार, छह, आठ या दस महीनों बाद एकमुश्त। क्या उसे जानने की कोशिश रही है? सरकार मानती है कि एक हेक्टेयर, दो फसली जमीन में साल में केवल एक सौ सैंतालिस (147) दिहाड़ियाँ बनती हैं। इनकी न्यूनतम दरें क्षेत्रवार और राज्यवार हैं। क्या यह न्याय है? अब माना दाई, पिरथी बढ़ी, फूसे नाई आदि की जिम्मेदारी सरकार नहीं उठाती। ये तो मेरे साथ जुड़े हैं। हम सब एक हैं। हमारी सबकी, गाँव समुदाय की आमदनी मेरी मजदूरी में आती है।

ऐसी विकट दशाओं में काम करने वाले कौशलपूर्ण किसान की मजदूरी उतनी क्यों नहीं जितनी एक कुशल औद्योगिक मजदूर को दी जाती है? मुझको भी पूरे तीन सौ पैंसठ दिनों का भुगतान मिले। महंगाई, चिकित्सा आदि सभी भत्ते भी इसमें जोड़ कर गिने जायें। . .

– राजवल, जोया, मुरादाबाद – 244222

14.11.94

पहले कदम पर ही

बहुत प्रयास करने पर मुझे न्यूटेक इंडिया नाम की एक छोटी फैक्ट्री में काम मिला। यह फैक्ट्री विश्वकर्मा इन्डस्ट्रीयल कम्पलेक्स, मुजेसर में है। मेरी ड्यूटी 8.30 से 5 बजे तक थी। और वेतन मात्र 600 रुपये। मुझे 5 से 6 बजे तक एक घन्टे का ओवर टाइम भी करना पड़ता था। फैक्ट्री में हमसे लखानी के जूते से सम्बन्धित काम लिया जाता था। 15.11.94 को जब हम एक बजे लन्च करने लगे तो मैनेजमेंट 2 बजे लन्च करने को कहा। जब मैंने इसका विरोध किया तो मैनेजमेंट ने कहा कि तुम्हें लन्च के लिये एक मिनट का भी समय नहीं दिया जायेगा। हम जैसा बोलते हैं वैसा ही करना पड़ेगा। मुझे उसी समय काम से हटा दिया और जब मैंने अपने काम के पैसे माँगे तो नहीं दिये और धमकियाँ दी। मैं जब दूसरे दिन भी पैसे माँगने गई तो धमकियाँ दी गई।

परेशान हो कर मैंने श्रम अधिकारी (महिला) से शिकायत की। मैनेजमेंट को पता चला तो मुझे बार-बार पैसे लेने के लिये बुलाया। मुझे कई बार फैक्ट्री जाना पड़ा। अन्ततः मैनेजमेंट को मेरा साढे चार दिन का वेतन देना पड़ा।

न्यूटेक इंडिया में लगभग 15 महिला, पुरुष मजदूरी करते हैं। वहाँ न्यूनतम मजदूरी तो नहीं ही दी जाती, दो-दो तीन-तीन महीनों तक वेतन भी नहीं दिया जाता।

29.11.94 – वीणा

कही-सुनी-देखी

★ **हैदराबाद एसबेसटोज** के एक निकाले हुये मजदूर ने बताया, "मेरा केस आठ साल बाद अब जा कर चन्दीगढ़ से रेफर हो कर यहाँ लेबर कोर्ट में आया है। मैनेजमेंट ने 8 साल तो केस शुरु ही नहीं होने दिया। अब पता नहीं यहाँ कोर्ट में फैसला होने में कितने साल लगेंगे।"

★ इसका दिमाग जापानी है, इसकी टैक्नोलॉजी जर्मन है और इसके पास पैसा अमरीकन है। **आयशर ट्रैक्टर्स** के कुछ वरकरों ने बात-चीत में आयशर मैनेजमेंट की इस प्रकार कुछ देर खूब बड़ाई करने के बाद कहा, "लेकिन आयशर मैनेजमेंट में इन्सानियत नाम की चीज नहीं है। तीस साल से फैक्ट्री में काम कर रहा एक आदमी अपने जवान बेटे की मौत के सदमे से असन्तुलित-सा हो गया है। और मैनेजमेंट है कि उससे सहानुभूति रखने, उसे सान्त्वना देने की बजाय उसे नौकरी से निकालने की फिराक में है।"

★ **नगर निगम चुनावों** के दौरान फरीदाबाद में पुलिस ने स्टेनगनों, सैल्फ लोडिंग राइफलों, पिस्तौलों, डन्डों-थप्पड़-मुक्कों और बदजुबान से आतंक का माहौल बनाया। कई जगह लोगों को इसके लिये डी सी और एस पी की तारीफों के पुल बाँधते सुना।

★ अक्टूबर में फरीदाबाद में पुलिस सुबह-सवेरे जगह-जगह से सैंकड़ों लोगों को पकड़ कर थानों में ले गई। 15 दिन चले इस **आतंक अभियान** की चर्चा तक नगर निगम चुनाव में नहीं सुनाई दी हालांकि 500 से ऊपर उम्मीदवार शोर-शराबे में एक-दूसरे के कान काट रहे थे।

नकली गहने, नकली छापे, असली आफत

फैक्ट्रियों में तालाबन्दी करना तो मैनेजमेंटों की आम प्रवृति है लेकिन काम के दरम्यान मजदूरों को फैक्ट्री में बन्द करना जरा अपवाद है। ऐसी अनहोनी किम क्राफ्ट, प्लाट न. 20, पटपड़गंज गाँव, दिल्ली स्थिति फैक्ट्री में हुई। सितम्बर में शाम पाँच-छह बजे एक दिन लेबर इन्सपैक्टर जाँच करने पहुँचे। मैनेजमेंट ने उन्हें देखते ही ऊपर की मंजिल स्थित फैक्ट्री में ताला जड़ कर वहाँ काम कर रहे महिला व पुरुष मजदूरों को बन्द कर दिया। आर्टीफिशियल जेवर बनाने वाली इस फैक्ट्री में लगभग 50 महिला और 150 पुरुष मजदूर कार्यरत हैं। न्यूनतम मजदूरी नहीं दी जाती। वेतन मात्र 700 से 1100 रुपये है। महिला मजदूरों को भी सुबह 9 से रात 9 बजे तक 12 घन्टे ड्यूटी करना अनिवार्य है। कैंटीन सुविधा नहीं है। ओवर टाइम सिंगल दी जाती है।

खैर, मजदूरों को 12 बजे रात में 'मुक्ति' मिली। महिला मजदूर अपनी जेब से भाड़ा दे कर रिक्शाओं से घर गई। सच है कि लेबर इन्सपैक्टरों के उगाही अभियान का परिणाम भी मजदूरों को ही भुगतना पड़ता है।

(दिल्ली से यहाँ दोस्तों से मिलने आये एक मजदूर ने उपरोक्त बातें बताई।)

क्या आप खुशकिस्मत हैं?

छह-सात महीने पहले एक विद्यार्थी की दस-ग्यारह साल बिना नागा स्कूल जाने के लिए, एक मॉडल स्टूडेंट के रूप में खूब वाहवाही हुई थी। बीमारी में भी उसके माँ-बाप उसे स्कूल जरूर पहुँचा देते थे। माँ-बाप को भी उनके हिस्से की प्रशंसा दी गई। दुनियां-भर में सुबह से ही स्कूल जाते बच्चों की कतारें नजर आती हैं। दुलार-प्यार-डाँट- फटकार से बच्चों को सुबह-सुबह जगाने का किस्सा हर घर का है। टीचरों-प्रिन्सिपलों द्वारा भी रोज समय से और साल में कम से कम छुट्टी कर स्कूल पहुँचने पर बड़ा जोर दिया जाता है। आगे चल कर यूनिवर्सिटी, ऑफिस, फैक्ट्री में यह सिलसिला जारी रहता है – फैक्ट्रियों में मजदूरों को महीने में कोई छुट्टी न करने के लिए बीस-पचास रुपयों का लालच दिया जाता है। स्कूल तो हैं ही इस आदत और इस मानसिकता के ट्रेनिंग सेन्टर।

काम, डिसिप्लिन और समय की पाबन्दी से त्रस्त आज की दुनियां में आराम और नींद व्यर्थ माने जाते हैं। इनमें कम से कम समय नष्ट करना सफलता के लिए लाजमी है। इस वजह से बचपन से ही मन मार कर काम करने में अधिकतर समय बीतने के कारण, तनाव एक प्रमुख समस्या बन गया है। पूरी नींद न लेने के कारण, सोने का समय शारीरिक जरूरत के अनुसार एडजस्ट न कर पाने के कारण, नींद-संबंधी बीमारियों की तादाद में निरन्तर बढ़ोतरी हो रही है। अधिकाधिक समय बल्ब/ट्यूब की रोशनी में बिताने की वजह से भी नींद की समस्याएं बढ रही हैं। कुछ जानलेवा भी सिद्ध हो रही हैं – घातक रोगों की शक्ल में और थकान के कारण हो रहे एक्सीडेन्टों के रूप में।

नींद के अभाव से बढती मुश्किलों से निपटने के लिए मैनेजमेन्टों द्वारा करवायी जा रही रिसर्च में कुछ ऐसे तथ्य भी उभरे हैं जो कि उनके लिए असुविधाजनक हैं। दोपहर बाद कुछ समय सोना तनाव कम करता है। सर्दियों में सुबह देर तक सोना स्वाभाविक और सेहत के लिए लाभकारी है। बढिया नींद के बिना सेहतमंद रह पाना मुमकिन नहीं है।

थके मन, थके शरीर और थके मस्तिष्क के इस निराशाजनक माहौल में एक खुशी का पहलू नजर आता है। यह कि दो-ढाई सौ वर्षों से गैस-बिजली की मदद से रात-दिन काम करवाए जाने के बाद भी, नींद की अभिलाषा बुझी नहीं, ज्वलंत है। खुशकिस्मत वह नहीं जो बचपन से ही कम सोने की आदत डाल कर डाँट-फटकार से बच जाते हैं। खुशकिस्मत वह हैं जो बरसों की डाँट-डपट के बावजूद नींद में मदहोश रहते हैं। जिनके ख्वाबों में नींद है, जो नींद के ख्वाब लेते हैं उनके लिये आराम, फुर्सत के सपने मात्र सपने ही नहीं, फुर्सत और चैन हासिल करने के लिए प्रेरणा स्रोत भी बन सकते हैं।

कम्पीटीशन के गुल

1968 के ओलम्पिक खेलों में जिमनास्टिक में गोल्ड मैडल विजेता ओल्गा कारासेवा-कोवालेन्को ने बताया है कि परफारमेन्स बढाने वाली दवाओं, ड्रगों के विकल्प के तौर पर तकनीकी विशेषज्ञों ने उसे गर्भवती होने और फिर गर्भपात कराने को मजबूर किया। ओल्गा ने कहा है, "डॉक्टरों ने हमें बताया था कि गर्भवती महिला का शरीर अधिक नर हारमोन उत्पन्न करता है इसलिये अधिक ताकतवर बन सकता है।"

ओल्गा के पुरुष मित्र ने उसे गर्भवती किया और दस हफ्ते बाद गर्भपात कर दिया गया। ओल्गा ने कहा है, "गर्भ धारण करने और फिर गर्भ गिराने से मैं इनकार कर देती तो मुझे ओलम्पिक में हिस्सा नहीं लेने दिया जाता।"

फस्ट, गोल्ड मैडल, सफलता . . . कम्पीटीशन, प्रतियोगिता, होड़ ने राष्ट्रध्वजों के आवरणों में ढेरों ओल्गाओं के मन और शरीर को लामबंद कर लहुलुहान किया है। हनुमान के किस्से की तरह किसी भी राष्ट्र की छाती फाड़ी जाये तो ओल्गा दर ओल्गा सुबकती दिखाई देंगी।

किसकी हिफाजत? किसकी सुरक्षा? किसकी डिफेन्स?

नागपुर में बकवासघर की सुरक्षा के लिये तैनात पुलिस ने 23 नवम्बर को इस विधानसभा भवन पहुँचे एक जलूस पर हमला बोल कर 125 लोगों की हत्यायें कर दी। मंत्रियों और विधायकों की बक-बक को जनसमूहों के सम्भावित आक्रोशों से सुरक्षा प्रदान करने के लिये जिन विशेषज्ञों ने योजना बनाई थी उनकी निपुणता अव्वल दर्जे की साबित हुई। बकवासघर की सुरक्षा के लिये चक्रव्यूह ऐसी कार्यकुशलता से रचा गया था कि इतनी हत्यायें करने के लिए पुलिस को एक भी गोली नहीं चलानी पड़ी, लाठियाँ मार-मार कर ही पुलिस ने 125 लाशें बिछा कर पचास हजार की भीड़ को खदेड़ दिया।

एक मंत्री को जनसमूह के गुस्से से सुरक्षित रखने के लिये केरल के कन्नूर जिले में 25 नवम्बर को पुलिस ने लाठीचार्ज और फायरिंग कर 5 लोगों की हत्या कर दी तथा सौ को लहुलुहान कर दिया।

दिल्ली की सुरक्षा, लखनऊ की गद्दी की रक्षा के लिये 2 अक्टूबर को मुजफ्फरनगर जिले में पुलिस के चक्रव्यूह में फँसे जनसमूह में से दर्जनों सदा के लिये सो गये और अनेक जिन्दगी-भर सिसकती रहेंगी।

बंगलादेश में होमगार्ड जैसे पुलिस बल के 20 हजार सिपाहियों ने वेतन वृद्धि और अन्य सुविधाओं के लिये 1980 व 1984 के बाद इस पहली दिसम्बर को फिर बगावत कर दी। हड़ताली सिपाहियों ने अफसरों को कैद कर लिया और जलूस निकाले। 4 दिसम्बर को सुरक्षा सेनाओं के कमांडो दस्तों ने हैलीकोप्टर गनों और अन्य भारी हथियारों से हड़तालियों पर धावा बोला। राजधानी ढाका स्थित हैडक्वाटर में 4 हड़ताली सिपाहियों को मार कर और 664 को गिरफ्तार कर सुरक्षा सेनाओं ने अफसरों की रक्षा की।

सर्दी-गर्मी-बरसात में रात-दिन, साल के 365 दिन तंगहाली-बदहाली-दहशत के साये में जीवन काटने को मजबूर लोगों का अव्यवस्था-अराजकता-उथल-पुथल से भयभीत होना चौंकानेवाली बात है। यह कमाल है शिक्षा-दीक्षा-प्रचार का जिसका काम ही सुरक्षा को, कानून-व्यवस्था को आज की पवित्र गऊयें बनाना होता है। झूठ-फरेब के बोलबाले में हर ठप्पे पर सत्यमेव जयते अंकित करने वालों के लिये हत्यारे गिरोहों को सुरक्षा बल, रक्षा सेनायें कहना स्वाभाविक है। अपनी तंगहाली के खिलाफ कदम उठाते ही सुरक्षा बलों की यह हकीकत हमारे सामने आ जाती है। ऐसे में हमें खुद से ऐसे सवाल पूछने की जरूरत है : किसकी सुरक्षा? किस-किस की रक्षा? किसके लिये व्यवस्था?

और फिर, पार्लियामेंटों, विधानसभाओं, बैंकों, जेलों, मंत्रियों, उच्च अधिकारियों, सीमाओं की सुरक्षा की व्यूहरचना करते विशेषज्ञों तथा मिसाइलों-रासायनिक हथियारों-एटम बमों के निर्माण में जुटे वैज्ञानिकों-इंजिनियरों का काम महान आर्किटैक्ट अल्बर्ट स्पीयर से भिन्न नहीं है जिसने जर्मनी में हिटलर के समय उन अत्यन्त कार्यकुशल गैस चैम्बरों को डिजाइन किया था जिनमें लाखों लोगों की हत्या की गई। विशेषज्ञ-वैज्ञानिक-इंजिनियर अपने काम का मूल्यांकन करें या न करें पर दुनियाँ-भर में इस-उस सुरक्षा-व्यवस्था के नाम पर दिन ब दिन बढ रही क्रूर घटनायें डिमान्ड करती हैं कि हम ऐसा अवश्य करें।

जेल में हत्यायें

6 नवम्बर को उत्तर प्रदेश में पीलीभीत जेल में अधिकारियों ने लोहे की छड़ों व लाठियों से मार-मार कर 6 कैदियों की हत्या कर दी और 27 की हड्डी-पसली तोड़ दी। यह सब कैदी टाडा कानून के तहत जेल में बन्द थे।

माँगे रामों पर टाडा

15 फरवरी 1989 को देसी पिस्तौल रखने के आरोप में पुलिस ने माँगे राम को गिरफ्तार किया। 13 मार्च 1991 को माँगे राम पर टाडा लगा दिया गया।

माँगे राम ने बार-बार पिस्तौल-विस्तौल पास होने से साफ इनकार किया और कहा कि उसे निजी दुश्मनी में एक व्यक्ति ने अपने दोस्त पुलिस इन्सपैक्टर के जरिये फँसाया है।

12 बार पुलिस को गवाही के लिये तारीखें देने पर भी जब पर्याप्त गवाही नहीं दी गई तब आखिरकार. . . आखिरकार तीन साल बाद, नवम्बर 94 में दिल्ली की तीस हजारी अदालत के टाडा जज ने पुलिस को खोटी-खोटी सुनाते हुये माँगे राम को जेल से रिहा करने का आदेश दिया।

माँगे राम भाग्यशाली है। दिल्ली में ही तीन टाडा अदालतों में 2000 टाडा बन्दियों के केस बरसों से लटके हैं, कुछ तो 1986 में जब टाडा कानून बनाया गया था तब से जस के तस हैं। और जिन पर सरकार टाडा लगा देती है वे जमानत पर नहीं छूट सकते – ऐसा यह कानून है। वैसे यह और बात है कि टाडा बन्दियों को जमानत पर छुड़वाने के नाम पर वकील धड़ल्ले से टाडा बन्दियों के प्रियजनों से पैसे वसूल रहे हैं।

भारत में 1,114 जेलें हैं जिनमें 2,50,000 लोग बन्द हैं। इन ढाई लाख में बीस-बाइस हजार ही सजायाफ्ता हैं, बाकी लोग मुकदमों के फैसलों के इन्तजार में जेलों में बन्द हैं। जेलों की सरकार द्वारा निर्धारित कैपेसिटी से तिगुने से छह गुने तक लोग उनमें ठूँसे हुये हैं।

सामुहिक कदमों से जुड़े कुछ सवाल

(तीसरी किश्त)

यहाँ हम बहुत-ही संक्षेप में अनुभवों के आदान-प्रदान की आवश्यकता के प्रश्न को प्रस्तुत करेंगे।

हमें दूसरी फैक्ट्री के बारे में जान कर क्या करना है? दूसरे शहर में क्या हो रहा है इससे हमें क्या लेना-देना है? ईरान और जर्मनी की बातों का हम क्या करेंगे? अखबार में इन सब चीजों को क्यों दिया जाता है? और फिर, अखबार पढने से क्या होता है? हमने तो ऐसे ही खटना है, अखबार पढ़ें चाहे न पढ़ें!

उपरोक्त बातें विचारणीय हैं। साथ ही यह भी महत्वपूर्ण है कि आग में हाथ दे कर सीखने की जगह औरों को लगी ठोकरों से सीखना हमारे अपने हित में है। अन्य मजदूरों की सूझ-बूझ हमें भी सूझवान बना सकती है।

आज जो न्यूजीलैंड में मैनेजमेंटें कर रही हैं उसे कल मैनेजमेंटों द्वारा फरीदाबाद में दोहराये जाने की सम्भावना रहती है। आज की कराची कल की बम्बई हो सकती है। कल का बगदाद आने वाले कल में दिल्ली बन सकती है। एस्कोर्ट्स मैनेजमेंट द्वारा जनरल एग्रीमेंट में एक साल खा कर प्रत्येक एस्कोर्ट्स मजदूर को 60-70 हजार रुपये का नुकसान पहुँचाने के थोड़े दिन बाद बाटा मैनेजमेंट एक साल खा गई।

इच्छा-अनिच्छा के बावजूद विश्व का मानव समुदाय परस्पर जुड़ गया है। ऐसे में मजदूरों द्वारा अपने अनुभवों का आदान-प्रदान अति आवश्यक है। अखबार एक जरिया है जिसे इस्तेमाल करके मजदूर एक-दूसरे के खट्टे-मीठे अनुभवों को जान सकते हैं।

महँगा नाटक

मंगलवार, 29 नवम्बर को फरीदाबाद नगर निगम के चुनाव थे। मैनेजमेंटों और सरकारों की आमतौर पर इच्छा होती है कि मजदूर, लोग खुद कोई कदम न उठायें बल्कि नेताओं-प्रतिनिधियों पर सोचने-फैसले लेने की जिम्मेदारी छोड़ दें। मैनेजमेंटों की, सरकारों की कोशिश होती है कि ज्यादा से ज्यादा लोग प्रतिनिधि चुनने में हिस्सा लें इसलिये वोट डालने के दिन छुट्टी कर दी जाती है।

मजदूरों को, आम लोगों को दूसरों का मुँह ताकने की हालत में धकेलने के लिये, लीडरों की जमात को स्थापित करने के लिये खर्च उठाने में मैनेजमेंटें-सरकारें कोई खास परहेज नहीं करती पर फिर भी उनकी कोशिश होती है कि जहाँ हो सके बचत करें। फरीदाबाद डी सी का आदेश इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय है। साहब ने हुकम दिया कि निगम चुनाव में वोट डालने-डलवाने के दिन, 29 नवम्बर को छुट्टी रखने के लिये मैनेजमेंटें उस दिन को वीकली रैस्ट से बदल सकती हैं। मैनेजमेंटों ने 29 नवम्बर को रैस्ट में बदल दिया और वीकली रैस्ट के दिन काम करने के नोटिस लगाये।

फूँ-फाँ करने वाले कुछ लोगों ने, लगता है कि अनजाने में, रैस्ट बदलने से मना कर दिया और उनके चक्कर में पड़े नूकैम, झालानी टूल्स, बाटा के मजदूरों की एक दिन की ध्याड़ी नगर निगम चुनावों के भेंट चढ गई।

सस्ते श्रम की लूट में आप भी हिस्सेदार बनिये!

केल्विनेटर फैक्ट्री में हम एक चौथाई मजदूरों को सरकारी न्यूनतम वेतन भी न दे कर मालामाल होने में जुटे हैं। हमारे 60 लाख फ्रिज बनाने में ठेकेदारों के 800 मजदूरों ने भी अपने आप को कम्प्रेस किया है।

सस्ते श्रम की लूट में शरीक होने के लिये आपको मात्र यह करना है कि एक केल्विनेटर फ्रिज खरीदें और 1234 रुपये से फूल कर कुप्पा हो जायें।

वाय बाई केल्विनेटर

इस अखबार के काम में हाथ बँटाने के लिये, अखबार के विस्तार के लिये आप इनमें से कोई एक या कई अथवा सब काम कर सकते हैं :

– अखबार की सामग्री पर राय देना।

– अखबार में छपने के लिये सामग्री जुटाना।

– अखबार बाँटने में हिस्सा लेना।

– अखबार पर खर्च के लिये रुपये-पैसे देना।

क्लच आटो

दिल्ली बारडर के निकट मथुरा रोड़ पर स्थित क्लच आटो फैक्ट्री के गेट के बाहर अक्टूबर में लगे काले झन्डों में नवम्बर में तम्बू भी जुड़ गया। हममें से एक 29 नवम्बर को मजदूरों की बातें जानने के लिये क्लच आटो फैक्ट्री गया। गेट बाहर तम्बू में बैठे 20-25 मजदूरों को अखबार का नवम्बर अंक दिया और दिसम्बर अंक के लिये उन्हें अपनी बात लिख कर देने को कहा। बार-बार कहने पर भी क्लच आटो वरकरों का एक ही जवाब था, "लिख कर आज या कल दफ्तर पहुँचा देंगे।" यह याद दिलाने पर भी कि वहां आने-जाने में 2 घन्टे साइकिल चलानी पड़ेगी इसलिये तभी लिख कर दे दें, क्लच आटो मजदूर "खुद दे आयेंगे" दोहराते रहे।

एक तो मजदूरों से उनकी बात पूछने वाले ही कम हैं और फिर उनकी बात को छापने वाले अखबार तो और भी कम हैं। ऐसे में ऐसा रुख क्या गुल खिलायेगा?

थॉमसन प्रैस

भूदेव प्रसाद 1984 से थॉमसन में काम करता है। वह किसी भी यूनियन का सदस्य नहीं बना हालांकि काफी समय से वहाँ सिरफुटैवल करती दो यूनियनें हैं। 10 नवम्बर को सैकेन्ड शिफ्ट में रात पौने आठ बजे इस मजदूर से एक यूनियन नेता और उसके लगुये-भगुओं ने फैक्ट्री के अन्दर मार-पीट की। अगले दिन जब वह ड्यूटी के लिये पहुँचा तब जनरल मैनेजर रंकेश कपूर ने उसे काम पर लेने से मना कर दिया। जी एम ने भूदेव से कहा कि मैं झगड़े-झँझट में नहीं पड़ना चाहता इसलिये तुम इस्तीफा दे कर अपना हिसाब ले लो।

वी एक्स एल इंजिनियरिंग

फौज के लिये टाइम बम फ्यूज, मिसाइल असेम्बली, राडार असेम्बली, वायरलेस आदि में एक्सेल करती मैनेजमेंट ने 400 में 200 मजदूरों को सरप्लस घोषित कर दिया है और 55 दिन के हिसाब का नोटिस लगा दिया है। कुछ समय पहले एक मुखर मजदूर को निकाल कर मैनेजमेंट ने 25 अन्य मजदूरों के इस्तीफे हासिल किये थे। स्टाफ से भी मैनेजमेंट इस्तीफे लिखवा रही है – 250 के स्टाफ में से हाल ही में 10-12 जहाँ स्वयं नौकरी छोड़ कर गये हैं वहीं 20 से मैनेजमेंट ने इस्तीफे लिखवाये हैं।

तीन साला एग्रीमेन्ट अक्टूबर में होनी थी। मैनेजमेंट ने शर्त रख दी है : पहले 200 मजदूरों को नौकरी से निकालने पर सहमति दो।

मथुरा रोड़ स्थित वी एक्स एल फैक्ट्री गेट पर काले झन्डे लगे हैं। एक साइड मीटिंग और एक गेट मीटिंग ही अब तक हुई हैं।

मत करो मतदान . . .(पेज एक का शेष)

पक्ष-विपक्ष के सारे शोर-शराबे के बावजूद जैसे एक नेता का विकल्प दूसरा नेता और एक पार्टी की विकल्प दूसरी पार्टी नहीं है, वैसे ही लीडर शासन का आलटरनेटिव फौजी शासन नहीं है। यह सब तो एक-दूसरे के पूरक मात्र हैं।

दरअसल सारा मामला कम लोगों द्वारा ज्यादा लोगों पर नियन्त्रण का है। शोषण की बुनियाद पर खड़ी कुतुब मीनारों, विजय स्तम्भों को बनाये रखने का है।

"भीड़" से निपटने के लिये प्रतिनिधि-नुमाइन्दे-नेता-लीडर और पुलिस-फौज-खुफिया तन्त्र मैनेजमेंटों की बुनियादी आवश्यकताओं में हैं। "लोग बेवकूफ होते हैं; अपना भला-बुरा नहीं जानते, अपने जीवन को खुद नहीं जी सकते" आदि-आदि और "कोई न कोई तो अगुआई करने को चाहिये ही, लीडर के बिना काम नहीं चल सकता" आदि एक ही सिक्के के दो पहलू हैं – बड़े-छोटे, ऊँच-नीच, अमीर-गरीब वाले सीढी-नुमा इस ढाँचे को बनाये रखने के, कम लोगों द्वारा ज्यादा लोगों पर नियन्त्रण को कायम रखने के।

दलदल से निकलने की राह का सवाल, नई राह का प्रश्न सम्पूर्ण प्रतिनिधि पद्धति के पुनर्मूल्यांकन की माँग करता लगता है।

19 दिसम्बर को सुबह दस बजे, 20 को शाम 5 बजे और 21 दिसम्बर को रात 8 बजे इस अखबार के दिसम्बर अंक पर मजदूर लाइब्रेरी, आटोपिन झुग्गी में चर्चा होगी। हर कोई इसमें भाग ले सकता है।

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक एवं सम्पादक शेर सिंह के लिए जे० के० ऑफसैट दिल्ली से मुद्रित किया।
सौरभ लेजर टाइपसैटर्स, बी – 548 नेहरू ग्राउंड, फरीदाबाद द्वारा टाइपसैट।
RN 42233 **पोस्टल रजिस्ट्रेशन** L/HR/FBD/73